HindiTech
A Blind Double Peer Reviewed Bilingual Web-Research Journal

कथक में स्त्री का स्वर और प्रतिरोध : नृत्य की अभिव्यक्ति

अवंतिका शुक्ला

avifem@gmail.com

एसोशिएट प्रोफेसर, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, प्रयागराज केंद्र

मानव-जीवन में संप्रेषण का सबसे प्राचीन माध्यम हाव-भाव और भंगिमाएँ ही रहीं हैं। अपने विचारों का आदान-प्रदान बिना शब्दों के माध्यम से भी संभव रहा है। कितनी जटिल स्थितियों का विश्लेषण हाव-भाव द्वारा किया जा सकता है, यह विचारणीय है। उल्लास, क्रोध, जुगुप्सा, हास्य सभी की प्रस्तुति सांकेतिक भाषा के माध्यम से की जाती रही है। नृत्य भी एक ऐसा माध्यम रहा है, जिसकी अपनी एक भाषा है और वह बेहद संप्रेषणीय है। विभिन्न मुद्राओं के माध्यम से भावों और विचारों का संप्रेषण किया जाता रहा है। नृत्य जहाँ जीवन के उल्लास, शृंगार आदि के भावों का प्रकटीकरण करता रहा है, वहीं तांडव क्रोध की अभिव्यक्ति का भी माध्यम रहा है। भाषा के इस रूप का बेहद अलग और प्रगतिशील प्रयोग आज के दौर में शास्त्रीय कलाओं से जुड़ी तमाम नृत्यांगनाएँ करा रही हैं। इस लेख में उत्तर भारत की शास्त्रीय नृत्य विधा 'कथक' में नृत्य की भाषा के प्रयोगों पर चर्चा की गई है। माना जाता रहा है कि जिस तरह थिएटर या संगीत का जुड़ाव प्रगतिशील विचारों के साथ होता है, वैसा जुड़ाव शास्त्रीय नृत्यों का सामाजिक बदलाव या प्रजातांत्रिक विचारों से नहीं होता है। नृत्य में यह संभावना बेहद कम होती है कि वह अपनी प्रस्तुति में जटिल सामाजिक, राजनीतिक मुद्दों को प्रदर्शित कर पाए। इस बात को कथक की तमाम नृत्यांगनाओं ने झुठला दिया है। उन्होंने अपने नृत्य में विभिन्न साहित्यिक कृतियों की विषय-वस्तु के अतिरिक्त पर्यावरण,

यौनिक हिंसा, घरेलू हिंसा, अकाल, खाड़ी युद्ध, एड्स, निजी कानून, शिक्षा, तीसरे जेंडर आदि से जुड़े तमाम सामाजिक-राजनीतिक मुद्दों को लाकर नृत्य की भाषा के विस्तृत आयाम को सामने रखा है। इस प्रपत्र में विभिन्न कथक नृत्यांगनाओं की प्रस्तुतियों के माध्यम से कथक नृत्य की भाषा और विचार के फलक पर बात की गई है।

कथक में नृत्यांगनाओं ने इस नए दृष्टिकोण को अपने नृत्य में लाकर एक नई परंपरा को आगे बढाया है। यह परंपरा मैडम मेनका ने प्रारंभ की थी, जिसमें रवींद्र नाथ टैगोर और उदय शंकर का भी प्रभाव था। रवींद्रनाथ टैगोर के मन में शास्त्रीय नृत्य के पुनरुत्थान की एक गहरी लालसा थी। साथ ही भारतीय संस्कृति में उनकी गहरी जड़ें होने के बावजूद वे हमेशा कला के उत्थान के लिए पूरब-पश्चिम के भेदभाव में उलझने के सख्त खिलाफ थे । उनका मानना था कि अच्छे विचार जहाँ से भी आएँ, उनका स्वागत करना चाहिए। अपने मस्तिष्क को हमेशा खुला रखना चाहिए। वे एक ऐसा नृत्य चाहते थे, जो कि प्रादेशिक सीमाओं से ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय सीमाओं से भी पार हो। उनका घोर विरोध उस समय कोलकाता में प्रचलित नाच के लिए था। जापान में जाकर उन्होंने जापानी नृत्य के बारे में टिप्पणी की कि यह एक ऐसा नृत्य है, जिसमें स्थूल और निम्नस्तरीय शारीरिकता नहीं है। यह टिप्पणी उन्होंने कोलकाता में प्रचलित नाच के संदर्भ में की थी[1]। यह दौर नाच विरोधी आँदोलन के बाद का था, जिसमें इन नाचने वाली तवायफों को बहुत ही हीन दृष्टि से देखा जा रहा था, जबकि तथाकथित शुद्ध भारतीय नृत्य-कला को बचाए रखने के प्रयास भी किए जा रहे थे। वहीं दूसरी ओर उदय शंकर ने नृत्य को लेकर काफी सक्रिय प्रयास किए। सबसे पहले तो उन्होंने स्वयं को किसी खास तरीके की शास्त्रीय शैली में सीमित नहीं रखा। नृत्य के प्रति एक खुला रवैया अपनाया, जबकि दूसरी ओर उन्होंने दो प्रकार से शास्त्रीय नृत्य को प्रयोगधर्मी बनाने की कोशिश की। एक ओर वे भारतीय मिथकों और आख्यानों की सुंदरतम प्रस्तुति चाहते थे, वहीं मशीनीकरण की प्रक्रिया के खिलाफ एक संवेदनशील मनुष्य का विरोध भी प्रस्तुत किया। इसी मुद्दे को लेकर **मानव और मशीन** नाम से नृत्य नाटिका बनायी गई थी। इन लोगों की मृत्यु एवं देश की आजादी के बाद संस्कृति के बड़े-बड़े संस्थानों में पारंपरिक एवं पितृसत्तात्मक सोच के मठाधीशों के आने के बाद नृत्य में प्रयोगों का दौर कम हो गया। मैडम मेनका ने भी कम आयु में ही देह त्यागी, पर फिर भी उस छोटे दौर में ही इन्होंने इस लहर को आगे तक

बढाया। उन्होंने कथक को मंचीय विधा में प्रवेश कराया। कथक जो कि एकल नृत्य के रूप में जाना जाता था, निजी महफिलों से मंच की प्राप्ति के बाद उसमें समूह में नृत्य करने का प्रचलन बढ़ा, क्योंकि कथक को शास्त्रीय नृत्य और धर्म से जोड़ने में मिथकों पर आधारित धार्मिक कथाओं पर एकल प्रस्तुति उतना आकर्षण उत्पन्न नहीं कर सकती, जितना कि सामूहिक प्रस्तुति। मैडम मेनका को उनकी प्रस्तुतियों के लिए कई बड़े देशी-विदेशी पुरस्कार भी मिले पर आजादी के बाद अपने पारंपरिक गुरुओं के हाथ में जाकर नृत्य ने अपना पारंपरिक चोंगा पहन लिया। इस परंपरा में नृत्य में प्रयोगधर्मिता या कला की अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारी को समझने वाले लोग कम थे। शुद्धता या प्रयोधर्मिता के बीच एक बहस कथक समाज में चल रही है। कथक के प्रति आज भी घरानेदार गुरुओं का नज़रिया नहीं बदला है। कथक केंद्र में हस्तकों की मुद्राओं को निर्धारित करने के लिए एक संगोष्ठी आयोजित किया गया। उसमें बिरजू महाराज द्वारा प्रयुक्त हस्तकों का दस्तावेजीकरण किया गया। पल्लबी चक्रवर्ती अपनी पुस्तक 'बेल्स ऑफ चेंज' में इस बात का ज़िक्र करती हैं कि किस तरह विभिन्न क्षेत्रीय कथक केंद्रों से सीखकर आए विद्यार्थियों को कथक केंद्र में जाकर सबसे पहले एक आधार पाठ्यक्रम कराया जाता है, जिसमें उन्हें लखनऊ घराने के नृत्य की शैली बतायी जाती है, ताकि विद्यार्थी अपनी क्षेत्रीय शैलियों के प्रभाव से मुक्त होकर शुद्ध कथक सीख सकें[2]।

कथक के शुद्धतावादी नज़रिए से अलग कई नृत्यांगनाएँ इस क्षेत्र में आईं, जिन्होंने इसकी पारंपरिक सीमाओं से पार जाकर इस नृत्य को एक नई भूमिका में लाया। कथक के ऊपर जो आरोप लगाया जाता था कि यह राधा-कृष्ण और गोपियों से आगे नहीं निकल पाया है, या फिर थिएटर, कविता, चित्रकला की तुलना में नृत्य अपनी सामाजिक ज़िम्मेदारियों को वहन नहीं कर पा रहा है, इस तरह के आरोपों से तमाम नृत्यांगनाओं ने कथक को मुक्त कराया और लोगों को यह बताया कि कथक एक बंद नृत्य नहीं है, बल्कि इसके भीतर तमाम आयामों को समेटने की ताकत है। इस प्रक्रिया में हमें नृत्यांगनाओं की एक लंबी सूची मिलती है। जिसमें सर्वश्री कुमुदिनी लाखिया, उमा शर्मा, शोवना नारायण, कुमकुम धर, शाश्वती सेन, प्रेरणा श्रीमाली, दक्षा सेठ और अदिति मंगलदास आदि प्रमुख हैं। धीरे-धीरे इस प्रक्रिया को बदलते समय के साथ कुछ घरानेदारों ने भी अपनाया, पर यह उनके नृत्य का बहुत छोटा-सा हिस्सा भर बन पाया, जबकि इन नृत्यांगनाओं ने अपने नृत्य में उसे बड़ा स्थान दिया। खासतौर पर कुमुदिनी लाखिया, उनके विद्यार्थी दक्षा,

अदिति, इसके साथ गुरु शोवना नारायण आदि ने तो कथक में नवाचार और सामाजिक मुद्दों को शामिल कर ऐसी प्रस्तुतियों की झड़ी लगा दी। दक्षा सेठ ने कथक के आधार के साथ मालाखंब और कलारिपयट्टू जैसी खंबे पर चढ़ने की कला और युद्ध कलाओं को शामिल कर नृत्य की एक नई भाषा का ही निर्माण कर दिया। इन नृत्यांगनाओं ने पारंपरिक वातावरण और पारंपरिक शैली में ही कथक की शिक्षा ग्रहण की। पर अपने ज्ञान और जीवन के प्रति एक उदार रवैए के कारण इन लोगों ने जहाँ कथक को उसकी सामंती जकड़न से मुक्त करने का असीम प्रयास किया, बल्कि काफी हद तक सफलता भी प्राप्त की। जहाँ पहले कथक की सत्ता का गढ़ सिर्फ लखनऊ घराना हुआ करता था, आज ये महिलाएँ सत्ता के इस गढ़ को चुनौती देने की हैसियत में हैं। इनकी अपनी सत्ता है, प्रतिष्ठा है। कई बार कथक को उसके मूल रूप से परिवर्तित करने का आरोप भी इनके ऊपर लगता है पर ये अपनी काबिलियत से जब देश-विदेश में कथक के प्रति लोगों में आकर्षण और सम्मान पैदा करती हैं, तो ये कथक के भविष्य के रूप में देखी जाती हैं। अपने काम के प्रति इनमें कितना गहरा सम्मान है, अदिति इसका बड़ा उदाहरण हैं कि किस तरह वे अपने सिद्धांतों के लिए बड़े से बड़े पुरस्कार या सम्मान को भी ठुकरा सकती हैं। वे अपने विचारों और सिद्धांतों पर अडिग हैं। यह दृढ़ता इन नृत्यांगनाओं की प्रस्तुतियों में भी देखने को मिलती हैं।

इन नृत्यांगनाओं की विभिन्न रचनाएँ, जो कि पारंपरिक प्रस्तुतियों से हटकर हैं, उन्हें हम दो प्रकार से देख सकते हैं। एक तो वे, जिसमें नृत्य-शैली या नृत्य की प्रस्तुति अलग तरह से की गई है। यह प्रस्तुति पौराणिक या मिथकीय पात्रों में सिमटी नहीं हैं, बल्कि जीवन जगत से जुड़ी तमाम चीज़ें हैं। फिर चाहे बात ग्रह-नक्षत्रों की हो या मनुष्य की छाया की। वहीं, दूसरी ओर बात सामाजिक, राजनीतिक मुद्दों की आती है। इसमें कई बार मिथकीय पात्रों की मदद से या फिर आम जन-जीवन से जुड़े साधारण मनुष्यों के जीवन-संघर्षों की प्रस्तुति के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों को उजागर किया गया है और लोगों को अन्याय के खिलाफ लड़ने के लिए प्रेरित भी किया है। इसमें जेंडर, हिंसा, जाति, पर्यावरण आदि से संबंधित मुद्दों को प्रमुखता से शामिल किया गया है। आगे उन प्रस्तुतियों का एक संक्षिप्त लेखा-जोखा प्रस्तुत है।

1. **कुमुदिनी लाखिया**

कथक के क्षेत्र में नवीन प्रयोगों के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण नाम कुमुदिनी लाखिया का आता है। घरानों के परंपरागत कथक की प्रस्तुति से अलग कथक को एक नए अर्थ में भरकर सामने लाने का काम कुमुदिनी ने बखूबी किया है। कुमुदिनी ने एकल प्रस्तुति के अलावा नृत्य-निर्देशन में बहुत बड़ी भूमिका का निर्वहन किया। नृत्य-निर्देशन का क्षेत्र बहुत ही चुनौतीपूर्ण होता है। इसमें नृत्य की बारीकियों के साथ मंच का स्पेस, साज़, संगीत और प्रकाश व्यवस्था की जानकारी, नई प्रस्तुतियों के लिए नई-नई चीज़ों की जानकारी और जुड़ाव अत्यंत आवश्यक होता है। कुमुदिनी स्वयं को इस मामले में भाग्यशाली मानती हैं कि उनकी शुरुआती शिक्षा-दीक्षा के बीच में ही उन्हें रामगोपाल जैसे विश्व प्रसिद्ध नृत्य निर्देशक के साथ काम करने का मौका मिला, जिसने उनके फलक को विस्तार दिया।

कुमुदिनी ने 1967 में नृत्य-निर्देशन का पहला प्रयास किया। इस प्रस्तुति का नाम **ठुमरी की विभिन्नताएँ** था[3]। इस प्रस्तुति को एकल की जगह पाँच नृत्यांगनाओं द्वारा प्रस्तुत किया गया था। इसकी खास बात इसकी मंचीय दर्शनीयता रही। इस प्रस्तुति में मंच पर अलग-अलग रंगों की स्क्रीन लगायी गई। नृत्यांगनाओं की वेश-भूषा सफेद थी, पर जब वे उस स्क्रीन के पास होती थीं, तो वे अलग-अलग रंगों में दिखती थीं। दर्शक इस प्रस्तुति से अभिभूत थे। आगे कुमुदिनी ने और गंभीरता से अपने कदम नृत्य-निर्देशन की तरफ आगे बढाए। उनकी कुछ प्रस्तुतियाँ बेहद चर्चित रहीं, जिनमें प्रमुख **“दुविधा” (1971) “धबकर” (1973), ”अतः किम” (1981), “कोट” (खूंटी पर टंगे लोग) (1985), ”सम संवेदना” (1993)** थीं। **दुविधा** की प्रस्तुति कथक के इतिहास में यह नृत्य एक महत्त्वपूर्ण परिघटना है। इस नृत्य की प्रस्तुति में कुमुदिनी ने कथक की पारंपरिक वेश-भूषा, सज-धज का बिल्कुल भी इस्तेमाल नहीं किया। एक साधारण साड़ी और वेणी से गुंथे बालों के साथ अपने नृत्य की प्रस्तुति की। दुविधा एक अधेड़ पत्नी और माँ की कहानी है, जो आज़ादी चाहती है, पर उसके भीतर एक कर्तव्य का ज़बर्दस्त भाव भी है[4]। **कोट** सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की रचना पर आधारित प्रस्तुति रही। 1985 में तैयार की गई प्रस्तुति कोट के बारे में कुमुदिनी बताती हैं कि जब सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने उनसे अपनी कविता कोट पर नृत्य प्रस्तुत करने को कहा, तो वे बहुत पशोपेश में थीं, क्योंकि उस कविता के शब्दों को नृत्य में परिवर्तित करना बहुत कठिन था। कुमुदिनी कहती हैं कि उस समय मुझे कवियों से बहुत ईर्ष्या भी हुई, क्योंकि वे एक साधारण से कागज़ पर बड़ी से बड़ी या बारीक

से बारीक बात को अभिव्यक्त कर सकते हैं, जो कि नृत्य में कई बार कठिन होता है। कोट कविता में एक पुराना कोट है, जो खूंटी के सहारे टंगा है। उसकी बाहों पर धूल जम चुकी है, बटन टूट चुके हैं और लंबी सेवा देने के बाद भी मिले अकेलेपन से वह दुखी है। इस कविता को नृत्य में ढालने के लिए कुमुदिनी ने कोट के स्वभाव को ही प्रदर्शित करने वाला एक किरदार गढ़ा। इस प्रस्तुति की खास बात थी कि पारंपरिक कथक प्रस्तुति की भाँति इसमें शब्दशः अभिव्यक्ति नहीं थी, बल्कि उस कविता के भाव को प्रस्तुत करने का प्रयास नए तरीके से किया गया।

अपने नृत्य-निर्देशन में नवीन प्रयोग शामिल करने के लिए कुमुदिनी अन्य कलाओं जैसे संगीत, चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला आदि को अपनी प्रेरणा मानती हैं। वे कहती हैं कि इन सभी कलाओं में कलाकारों ने काफी प्रगतिशील तरीके से विचार किया है। अपनी अभिव्यक्तियों में उन्होंने अपने देश-काल, उसका सौंदर्य-बोध, कला की भविष्यगामी संभावनाओं आदि को शामिल किया है। नृत्य की दुनिया (उसमें भी शास्त्रीय नृत्य) की दुनिया में इसका नितांत अभाव मिलता है। यह दुनिया सिर्फ अपनी जड़ों में ही सिमटी है। इससे बाहर आना बहुत जरूरी है, वरना कला की मृत्यु हो जाएगी। जिस तरह से आज के दौर में दुनिया हमारे काफी पास आती जा रही है, हम लगातार भिन्न संस्कृतियों के साथ रूबरू हो रहे हैं, उसमें नृत्य को भी इन चीज़ों के करीब आना होगा। इसी आपसी सहयोग की शुरूआत कुमुदिनी ने की। उन्होंने कथक के साथ मिनिएचर पेंटिंग, वास्तुकला, कविता, विभिन्न प्रकार के संगीत आदि के मेल से कथक की प्रस्तुति की [5]। कुमुदिनी ने एक अन्य प्रयोग मौन मंच पर प्रस्तुति की नींव रखी। आज मौन को भी संगीत की एक भाषा के रूप में लेने का प्रयास किया जा रहा है। उनकी शिष्या अदिति मंगलदास की प्रस्तुति काफी सराहनीय है। कुमुदिनी की यह तार्किक सोच नृत्य के आगे की दशा-दिशा तैयार करने में काफी निर्णायक रही है। वे अपने तर्क प्रस्तुत करते हुए कहती हैं कि-

परंपरा और नवीन प्रयोग दोनों एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं, बल्कि जो आज हम कर रहे हैं, वही कल परंपरा बनेगा। विकास का महत्त्वपूर्ण सिद्धांत ही विभिन्नताओं और एकीकरण पर टिका है। हम सभी की परंपरा निर्मिति में एक भूमिका होती है। नृत्य-कला (या कोई भी कला) का एक प्राणवान स्वरूप होता है,

अगर हम नवाचार से नहीं जुड़ेंगे, तो कला की मौत हो जाएगी। रचनाधर्मी कला का तो कोई अंत ही नहीं होता, जितना आप सीखते हैं, जानते हैं, देश-विदेश घूमते हैं, उतनी ही नई बातें आपके ज़हन में आती हैं। आप क्षितिज के जितने करीब जाने का प्रयास करते हैं, आपको वह और ज्यादा विस्तृत रूप में दिखता है[6]। कुमुदिनी का पूरा जीवन नृत्य-कला के साथ उसकी प्रयोगधर्मिता के लिए समर्पित रहा है।

2. **माया राव**

माया राव दिल्ली में शंभू महाराज की पहली शिष्या थीं, जो छात्रवृत्ति मिलने के बाद बंगलुरु से दिल्ली कथक सीखने आयी थीं। माया राव का मानना था कि कला जीवन का आईना होनी चाहिए और मनुष्य के जीवन के अनुभव उसकी कला में आने चाहिए। माया 1967 की एक घटना का ज़िक्र करते हुए बताती हैं कि भारतीय नाट्य संघ ने विज्ञान भवन में एक गोष्ठी का आयोजन कराया। उस समय छात्र आँदोलन चल रहा था, किसी विद्यार्थी ने स्वयं को जला लिया था, इस पर आक्रोश और भड़क गया। बाहर बसें जलायी जा रहीं थीं, लोग मर रहे थे। उस समय हमारी एक प्रतिनिधि इस बात पर काफी नाराज़ हुई कि बाहर हालात इतने खराब चल रहे हैं और हम यहाँ वातानुकूलित कक्ष में बैठकर गीत गोविंद, कुडीयट्टम, स्वप्नवासवदत्ता आदि देख रहे हैं। उनका कहना था कि आखिर कला क्या है? क्या उसमें हमारे जीवन का प्रतिबिंब नहीं होना चाहिए? इस बात से माया राव पूरी तरह सहमत थीं। वे हैवलॉक एलेस का उदाहरण देती हुई कहती हैं कि **नृत्य जीवन है**[7]। इसी विचार के आधार पर उन्होंने अनेक रचनाएँ कीं। उनकी रचनाओं में अकाल के खिलाफ संघर्ष के साथ साथ दहेज प्रथा, बहुओं को जलाना पर आधारित कन्यादान बनाया, जो महिलाओं के ऊपर शोषण व असमानता पर आधारित है। अन्य मुद्दों में आतंकवाद, बाबरी मस्जिद विध्वंस और उनके विद्यार्थियों द्वारा ही बनाया खाड़ी के देशों पर आधारित नृत्य नाटिका प्रमुख है। **अन्नम (फूड)** प्रस्तुति उपनिषद के एक श्लोक पर आधारित था। जिसमें बताया गया था कि जीवन अन्न के इर्द-गिर्द घूमता है, अतः ज्यादा से ज्यादा अन्न उगाना चाहिए। सी०एस० लक्ष्मी अपनी पुस्तक 'मिरर्स एंड जेस्चर्स' में लिखती हैं कि 40 के दशक में बंगाल में आए अकाल के मुद्दे पर हिंदुस्तान भर में नृत्य की प्रस्तुति की गई थी, कहीं-न-कहीं इसका जबर्दस्त प्रभाव माया के ऊपर था, जो उन्होंने **अन्नम** नाम से यह प्रस्तुति तैयार की[8]।

3. शोवना नारायण

शोवना नारायण की प्रस्तुतियों की एक लंबी फेहरिश्त है, जिसमें उन्होंने कथक की पारंपरिक सीमाओं के पार जाकर अपनी सामाजिक राजनीतिक प्रतिबद्धता को अपनी प्रस्तुतियों में उतारा है। उनकी हर प्रस्तुति एक संदेश के साथ आती है, चाहें वह महिलाओं के अधिकार का मामला हो, उन पर हिंसा का मामला हो या हमारे देश के नायकों जैसे गाँधी या विवेकानंद की प्रस्तुति हो। नृत्य में पारंपरिक दृष्टिकोण से अलग अपनी प्रस्तुतियों के बारे में शोवना का मानना है कि ***हम क्या कर रहे हैं जीवन में और हमारा अपना व्यक्तिगत जीवन क्या है? दोनों में अंतर नहीं होना चाहिए। यहाँ अगर हम सेंसिटिविटी की बात करें, तो व्यक्तिगत जीवन में भी वही होना चाहिए। अगर हम यहाँ कुछ कर रहे हैं और वहाँ कुछ तो डिस्कनेक्ट है।***[9]। 89-90 में महात्मा गाँधी के पोते राम चंद्र गाँधी ने उनके लिए सात नाटक लिखे, जिसका वे पाठ करते थे और शोवना उस पर अपनी प्रस्तुति देती थीं। अपनी साहित्यिक अभिरूचि, अपने शिक्षित पारिवारिक परिवेश और अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता के कारण उन्होंने अपनी प्रस्तुतियाँ तैयार कीं। पर अपनी इस अभिरूचि के बारे में उन्होंने कहा कि जब तक मेरे दिल से आवाज नहीं आती है कि इस पर प्रस्तुति पर काम करना चाहिए, तब तक मैं उसे नहीं करती हूँ । वे कहती हैं- ***अगर आप मुझे कहें कि ये चश्मा है इस पर कर दीजिए, मैं आपको दो लाख रूपये दूंगी तो मैं करने वाली नहीं हूँ । अगर मुझे फील नहीं होता, तो मैं नहीं करती***[10]।

शोवना की कुछ प्रस्तुतियाँ, जो कि काफी प्रसिद्द हुई थीं, जिनमें **मुझे भी तो जीने दो** शोवना की यह महत्त्वपूर्ण प्रस्तुति बालिका भ्रूण हत्या को लेकर है, इसमें एक अजन्मी बच्ची की पुकार को कथक के माध्यम से व्यक्त किया गया है। साथ ही उस माँ की पीड़ा भी अभिव्यक्त हुई है, जिसकी कोख का बच्चा उससे दूर कर दिया गया। कथक के माध्यम से इतने संवेदनशील मुद्दे पर शोवना ने काम करके एक बड़ी चेतना लोगों में जाग्रत करने का प्रयास किया [11]। **टूटा ये विश्वास क्यों** प्रस्तुति शोवना के लिए बहुत खास थी। इस प्रस्तुति के विषय को लेकर शोवना को काफी भयभीत करने का प्रयास किया गया। ***इस प्रस्तुति के लिए शोवना से कहा गया था कि अगर आप इसे करेंगी, तो आपका गला कट जाएगा। इतनी मुखर प्रस्तुति वह भी पारंपरिक कथक के भीतर, पर शोवना ने कहा कि कटता है, तो कटे पर वह अपनी***

सामाजिक ज़िम्मेदारियों से मुँह नहीं मोड़ सकतीं [*12*] । यह प्रस्तुति आज भी कथक में एक बोल्ड प्रस्तुति के रूप में जानी जाती हैं। यह प्रस्तुति एक वास्तविक घटना के ऊपर आधारित थी। पिता द्वारा अपनी अवयस्क पुत्री के साथ कौटुंबिक व्यभिचार को लेकर शोवना ने यह प्रस्तुति तैयार की और उसे कथक महोत्सव में प्रस्तुत किया। मुख्यतः यह उस लड़की की पीड़ा पर आधारित थी, जिसने इतना बड़ा ज़ुल्म अपने ऊपर सहन किया। उसने सबसे करीबी रिश्ते जिसे, जन्मदाता कहते हैं, से इतना बड़ा विश्वासघात हासिल किया। इसमें उस लड़की के साथ उसकी माँ का भी दर्द, उसके भीतर का गुस्सा भी प्रस्तुत किया गया है। एक तरफ वह अपनी बेटी के साथ है, तो दूसरी तरफ अपराधी पिता पूरे समाज के-साथ। यह नृत्य नाटिका कई प्रश्न अपने दर्शकों के समक्ष छोड़ती है कि क्या किसी रिश्ते में विश्वसनीयता बची है? हम समाज को किस ओर ले जा रहे हैं? इस समाज में क्यों एक लड़की को न्याय नहीं मिल पा रहा और अपनी जान देने के बाद भी लोगों की सारी संवेदना और साथ उस अपराधी पुरुष के साथ ही हैं, उसके साथ नहीं। शोवना की यह प्रस्तुति हर दर्शक को अपने भीतर झाँकने का मौका देती है कि वह किस ओर खड़ा है। **दिशांतर** प्रस्तुति के माध्यम से शोवना ने एक साथ कई सारे मुद्दों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस प्रस्तुति में मुख्यतः पर्यावरण के साथ जातिवाद, बंधुआ मजदूरी, परिवार नियोजन जैसे मुद्दे शामिल किए गए थे। पर्यावरण का मुद्दा शोवना ने नृत्य में तब उठाया था, जब लोगों ने इस मुद्दे को नृत्य-कला के माध्यम से प्रस्तुत करने के बारे में विचार भी नहीं किया था। पर्यावरण के माध्यम से शोवना एक बड़े राजनीतिक मुद्दे से टकरायी हैं। यह मुद्दा है, विकसित देशों की अन्य विकासशील देशों पर लूट [13]। उनकी बेखौफ लूट जहाँ अन्य देशों की प्राकृतिक संपदा का बुरी तरह दोहन करती है, जिससे आर्थिक असमानता बढ़ने के साथ साथ पर्यावरण का जबर्दस्त क्षरण होता है। इसके अलावा शोवना ने समाज में फैली जातिवाद और छुआछूत की समस्या को भी प्रस्तुत किया, अंत में इसका उपचार शोवना ने स्वयं के भीतर इन बुराईयों से दूरी का अहसास को जाग्रत होना बताकार गाँधी के महत्त्व को प्रतिपादित किया। **ख्वाहिशें** शायद शास्त्रीय नृत्यों में पहली प्रस्तुति होगी, जो कि किसी वेश्या के जीवन को केंद्र में रखकर बेहद संवेदनशील तरीके से प्रस्तुत की गई होगी। इस प्रस्तुति में एक वेश्या की इच्छा, आकांक्षाएँ उसके अपने मानसिक अवसाद, असम्मानजनक तरीके से जीने वाले जीवन के प्रति वितृष्णा और इस गंदगी से बाहर निकलकर

एक स्वस्थ परिवेश में रहने की उसकी हार्दिक अभिलाषा इस प्रस्तुति में लाने का प्रयास शोवना ने किया।[14] **मुक्तिलेखा** प्रस्तुति मुख्यतः मानवाधिकार को केंद्र में रखकर तैयार की गई थी। मानवाधिकार के अंतर्गत समाज के हर तरह के बंधन, असमानताओं से मनुष्य की मुक्ति एक आवश्यक तत्त्व है, इसी संदेश को प्रसारित करने के लिए यह नृत्य-नाटिका तैयार की गई। इस प्रस्तुति के केंद्र में औपनिवेशिक काल और गुलामों के व्यापार को केंद्र में रखा गया था। गुलामों के बच्चों से जबरन गुलामी करवाना, उनकी गरीबी, अशिक्षा, हाड़-तोड़ मेहनत के साथ 20वीं शताब्दी के दो मानवाधिकार विरोधी व्यक्ति हिटलर और मुसोलिनी द्वारा की गई हिंसा और रंगभेद को भी शामिल किया गया। अंत में इन अमानवीय गतिविधियों को मिटाने के लिए महात्मा गाँधी, मार्टिन लूथर किंग और नेल्सन मंडेला के प्रयासों को नृत्य के माध्यम से दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया[15]। मानवाधिकार पर प्रस्तुत यह प्रस्तुति शोवना के गहरे सामाजिक और राजनीतिक रुझानों को व्यक्त करती है। यह प्रस्तुति बिना शब्दों की सहायता के तैयार की गई। इसमें सिर्फ संगीत का ही सहयोग लिया गया। **अनुत्तर** भारत के प्राचीन मिथकों पर आधारित कथाओं को लेकर बनाया गया। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात तीसरे जेंडर को लेकर की गई।[16] अनुत्तर में शोवना ने दिखाने का प्रयास किया कि हम शिव की अर्धनारीश्वर के रूप में आराधना करते हैं, लेकिन वास्तविक जीवन में ऐसे लोगों के साथ हमारा व्यवहार कैसा होता है। क्या हम सामान्य मानवीय व्यवहार भी उनके साथ कर पाते हैं? क्या उन बच्चों को भी एक सामान्य जीवन जीने का अधिकार नहीं है? तीसरे जेंडर को मानव के रूप में सम्मान देने के प्रयास के लिए उनकी यह प्रस्तुति सदैव याद की जाएगी।

4. **उमा शर्मा**

उमा शर्मा का योगदान इस मामले में अतुलनीय है कि उमा ने 70 के दशक में कथक में हिंदी के कवियों की कविताओं को कथक में बहुतायत से शामिल किया। उमा बताती हैं कि उन्होंने पारंपरिक ठुमरी के अलावा सूर, तुलसी, कालीदास आदि की रचनाओं को अपने नृत्यों में शामिल किया। इसके बाद गोपाल दास नीरज की कविताओं पर आधारित **कारवां गुज़र गया** किया। इसमें गोपाल जी अपनी कविताओं का पाठ करते थे और उमा कथक के माध्यम से उन पर भावों की अभिव्यक्ति करती थीं। उमा ने उर्दू के भी कई शायरों को शामिल किया, जैसे- गालिब, कैफी आज़मी, फिराक गोरखपुरी, नज़ीर अकबराबादी, मखदूम आदि ।

उनकी महत्त्वपूर्ण प्रस्तुतियों में **इंद्रसभा** का नाम आता है, जिसमें उन्होंने वाजिद अली शाह के समय की नृत्य-कला और संस्कृति जीवित करने का काम किया।

5. **रानी खानम**

रानी खानम वर्तमान में हिंदुस्तान की एक मात्र मुस्लिम कथक नृत्यांगना हैं। रानी ने वह काम किया है, जिसे करने का साहस बड़े-बड़े साहसियों को भी नहीं हो पाएगा। रानी खानम के नृत्य की खास बात है, कथक में इस्लामिक रचनाओं को लेकर उनके प्रयोग। कथक की शुरुआत वंदना से करने के बजाय अजान से करके उन्होंने कथक के हाशिए पर चले गए धर्मनिरपेक्ष स्वरूप को सामने लाया। उनके नृत्य में मुगलकाल की खास पहचान हिंदू-मुस्लिम की साझी संस्कृति की झलक मिलती है। इस्लाम में नृत्य-संगीत के विरोध के बाद भी उन्होंने नृत्य की शुरुआत में कुरान की आयतों के साथ-साथ सूफी काव्य को अपने नृत्य में शामिल किया। रानी कहती हैं कि वे कथक का प्रारंभ गणेश वंदना से करती थीं, पर उन्हें यह अहसास रहता था कि ईश्वर तो एक है, तो उनके दिल में बसे उस ईश्वर का नाम लेकर वे नृत्य की शुरुआत क्यों नहीं कर सकती। इस विचार के साथ रानी ने अपने नृत्य की शुरुआत कुरान की शुरुआती पंक्तियों **कलमा (बिस्मिल्लाह-उर-रहमान-उर-रहीम)** से की। इसके अलावा वे अमीर खुसरो की पंक्तियों **अल्लाह ही अल्लाह, ज़िल्लेशान इलाह/तू रहीम, तू करीम, तू ग़फ्फार तू सत्तार** से भी अपने नृत्य की शुरुआत किया करती हैं।

इस तरह से कथक की शुरुआत कथक के क्षेत्र में नई बात थी। रानी को इस प्रयास के लिए कथक के पंडितों और इस्लाम के मुल्लाओं दोनों से संघर्ष करना पड़ा। पर धीरे-धीरे उनकी कला की गहराई के आगे दोनों को झुकना ही पड़ा। कथक में पारंपरिक प्रस्तुतियों के अतिरिक्त रानी ने दो प्रकार की प्रस्तुतियाँ मुख्य रूप से कीं, जिसमें पहली सूफी रचनाओं पर आधारित और दूसरी सामाजिक मुद्दों पर। सबसे पहले हम सूफी कलामों पर आधारित उनकी प्रस्तुतियों पर चर्चा करते हैं। **सूफी रचनाओं** पर प्रस्तुतियों के अतिरिक्त उन्होंने जयदेव, खुसरो, कालिदास की रचनाओं पर भी उन्होंने अपने नृत्यों का संयोजन किया। इन प्रयोगों को करने में आने वाली कठिनाइयों के बारे में उन्होंने बताया कि- ***मुझे याद है कि कुछ समय पहले मैंने***

अमीर खुसरो की रचनाओं को नृत्य के जरिए पेश किया था। वह प्रयोग अत्यंत कठिन था, क्योंकि प्रत्येक पद के दो भाव निकलते थे, एक तो शृंगार प्रधान और दूसरा भक्तिप्रधान। उन संवेदनशील बंदिशों को स्वयं ठीक से समझे बिना पेश करना बड़ा ही मुश्किल काम था, सो मुझे प्रत्येक बंदिश की गहराई में जाकर उन्हें समझना पड़ा, तब कहीं जाकर उन्हें समझाना पड़ा, तब कहीं मैं उन्हें ठीक ढंग से पेश कर पाई।

रानी के ये अनुभव बताते हैं कि अपनी प्रस्तुतियों में वे किस कदर डूब के काम करती हैं। इन प्रस्तुतियों में डूबना ज़रूरी भी है। ये प्रस्तुतियाँ चूँकि पारंपरिक प्रस्तुतियों से अलग हैं, अतः इनकी तैयारी में ज्यादा मेहनत लगती है, क्योंकि पहले से कथक के बने बनाए ढाँचे में ये फिट नहीं आतीं। इन्हें नए तरीके से ही तैयार करना पड़ता है। फैज़ अहमद पर 2010 में इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में भी कार्यक्रम हुआ था, जहाँ रानी ने अपने कार्यक्रम की शुरुआत फैज़ की नज़्म ***आइये हाथ उठायें हम भी/हम जिन्हें रस्मे-दुआ याद नहीं/हम जिन्हें सोज़-ए- मुहब्बत के सिवा/ कोई बुत कोई खुदा याद नहीं*** से की। इसके बाद ***राज़े उल्फत छुप के देख लिया/ दिल को बहुत कुछ जला के देख लिया, 'मुझसे पहली सी मुहब्बत मेरे महबूब ना माँग'*** और *अंत में* ***मेरा दर्द-ए-नग़मा-ए-बे सदा*** जैसी रचनाओं की कथक के माध्यम से प्रस्तुति जैसा दुष्कर कार्य किया[17]। इन रचनाओं पर कथक की तकनीकियों की बारीकियों और उनकी भाव-प्रवण प्रस्तुति से उन्होंने साबित कर दिया कि कथक का फलक कितना बड़ा है। इसी परंपरा में उन्होंने कई सामाजिक प्रस्तुतियाँ भी दीं। **नकाब, ब्लैक एंड रानी खानम** की सबसे साहसिक प्रस्तुति है, जिसमें उन्होंने मुस्लिम निजी कानून, जो कि कुरान और हदीस पर आधारित है, में अंतर्निहित अधिकारों की बात की है, जिसकी अनदेखी के कारण आज मुस्लिम समाज पिछड़ रहा है और मुसीबतों का सामना कर रहा है। यह प्रस्तुति महिलाओं को उनके अधिकारों के लिए जागृत करने और विपरीत वातावरण में भी हिम्मत न हारने की प्रेरणा देने के लिए बनायी गई थी[18] । **अन टेंडर टच** में रानी खानम ने घरेलू हिंसा के मुद्दे को केंद्र में रखा। इस प्रस्तुति में उन्होंने बताने की कोशिश की कि किस तरह हर किस्म की महिलाएँ हिंसा का शिकार होती हैं। हिंसा के मामले में वर्ग, जाति, अमीर, गरीब, शहर, गाँव का कोई अंतर काम नहीं करता बल्कि अमूमन सभी महिलाएँ किसी-न-किसी रूप में इससे जूझती रहती हैं। रानी ने अलग-अलग श्रेणियों की महिलाओं को लेकर कि उन पर किस-किस प्रकार से हिंसा होती है, नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया[19]।

शिविर एच आई वी एड्स के प्रति जागरुकता पर भी रानी ने काम किया। इस प्रस्तुति के केंद्र में वे महिलाएँ थीं, जो इसका शिकार बन जाती हैं या बहुत सी को अनचाहे ही अपने पतियों से ये बीमारी मिल जाती है [20]। इन मुद्दों पर रानी ने बहुत गंभीरता से काम किया है।

6. **अदिति मंगलदास**

अदिति मंगलदास कुमुदिनी लाखिया और बिरजू महाराज की बेहद योग्य शिष्या और कथक के क्षेत्र का बेहद जाना-माना नाम हैं। कथक के क्षेत्र में नवाचार या प्रयोगों के लिए अदिति बहुत प्रसिद्ध हैं। वे परंपरा को जड़ रूप में नहीं देखतीं, बल्कि उसे एक बहती हुई नदी के रूप में देखती हैं। जड़ता के स्थान पर गतिशीलता ही उनकी प्रयोगधर्मिता का आधार बनीं। दो योग्य गुरुओं से शिक्षा ग्रहण करने के बाद उन्होंने स्वयं को अपने तरीके से विकसित किया। अदिति कथक नृत्यांगनाओं की उस पाँत में आती हैं, जो जीवन की अपनी सोच के प्रति बेहद मजबूती से खड़ी रही हैं और तमाम आने वाले विचलन उन्हें बिल्कुल डिगा नहीं पाए। अदिति ने दो बार अपने सिद्धांतों के लिए दो पुरस्कार ठुकरा दिए, जिसे मैं उनकी प्रतिरोधी चेतना के रूप में ही देखती हूँ। पहला पुरस्कार गुजरात संगीत नाटक अकादमी द्वारा दिया जाने वाला गौरव पुरस्कार था। यह पुरस्कार 2007 में उन्हें देने का निर्णय गुजरात सरकार ने किया। अदिति ने इस पुरस्कार को लेने से मना कर दिया। 20 सितंबर 2007 को एक प्रेस रिलीज़ में उन्होंने अपनी बात रखते हुए कहा- ***मैं इस पुरस्कार की घोषणा से सम्मानित महसूस कर रही हूँ पर मैं अभी इस पुरस्कार को नहीं ले सकतीं, क्योंकि मैं तत्कालीन गुजरात सरकार की नीतियों और उसके कार्यों से असहमत हूँ । अतः तत्कालीन राज्य-सरकार द्वारा दिया जाने वाला कोई पुरस्कार मैं नहीं लेना चाहूँगी*** [*21*]।

गुजरात सरकार और उसकी नीतियों के खिलाफ बोलकर अदिति ने एक बड़े साहस का परिचय दिया, वहीं दूसरा पुरस्कार संगीत नाटक अकादमी द्वारा प्रदत्त था, जिसे अदिति ने अपने सिद्धांतों के चलते ठुकरा दिया। संगीत नाटक अकादमी की तरफ से उन्हें पुरस्कार दिए जाने की घोषणा से वे काफी उत्साहित थीं, पर उनका उत्साह उस समय ठंडा पड़ गया, जब उन्हें पता चला कि उन्हें रचनाशील और प्रयोगधर्मी होने की श्रेणी में रखा और पुरस्कृत किया जा रहा है। आपत्ति रचनाशीलता या प्रयोगधर्मिता से नहीं थी, बल्कि

कथक को श्रेणीकृत कर देने से थी। तहलका में छपे साक्षात्कार में उन्होंने अपनी बात रखी और इस निर्मित श्रेणी के पीछे की राजनीति को स्पष्ट किया। उनका कहना है कि दरअसल कथक को दो खाँचों में बाँट कर देखा जा रहा है, जिसमें प्रामाणिक कथक वह है, जो कथक केंद्र में बसे गुरु सिखाते हैं, जिसे शुद्ध और पारंपरिक कथक माना जाता है। दूसरी श्रेणी संगीत नाटक अकादमी नृत्य में नवाचार को अलग से एक श्रेणी के रूप में पुरस्कृत करने के माध्यम से विकसित कर रहा है।

तमाम कथक नृत्यांगनाएँ हैं, जो कथक को एक निश्चित सीमा के भीतर नहीं देखतीं, बल्कि उसे वे अपने देश-काल के साथ अपने भीतर के सौंदर्य-बोध के साथ करने की कोशिश करती हैं। इनके नृत्य को हमेशा संदेह की दृष्टि से देखा जाता रहा है, जैसे यह कथक के अलावा कुछ और हो। अदिति कहती हैं कि उन्हें श्रेणीकरण की इस दीवार से आपत्ति है। अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए वे एक घटना का ज़िक्र करते हुए बताती हैं कि बनारस में होने वाले कार्यक्रम के आयोजन के लिए एक नृत्यांगना से उसकी तस्वीर पोस्टर बनाने के लिए माँगी गई। कथक केंद्र से वह वापस आ गई, क्योंकि उस तस्वीर में नृत्यांगना ने दुपट्टा नहीं ओढ़ा था। उन लोगों का कहना था कि यह वेशभूषा पारंपरिक कथक की नहीं है। कथक केंद्र अपने पारंपरिक आग्रहों को लेकर बेहद सचेत रहता है, जबकि दूसरी ओर कुमुदिनी लाखिया ने 1970 में ही अपने कथक से दुपट्टे को छुड़ा दिया था। सितारा देवी, रोशन कुमारी, दमयंती जोशी, माया राव आदि तमाम नृत्यांगनाओं ने कथक में मजबूत इबारत लिखी और अपने नृत्य में अपने देश-काल को शामिल किया पर संगीत नाटक अकादमी की घटक इकाई कथक केंद्र इन परिवर्तनों में से अधिकांश को यह कथक नहीं है (समकालीन नृत्य हो सकता है) कहकर खारिज कर देता है और कथक के व्यापक आयाम की संभावनाओं पर एक कुठाराघात हो जाता है। वह एक छोटे पारंपरिक दायरे में ही सीमित होकर रह जाता है। अदिति अन्य भारतीय शास्त्रीय नृत्यों का उदाहरण देती हुई बताती हैं कि कलाक्षेत्र फाउंडेशन की तरफ से शेक्सपियर के ऑथेलो नाटक का मंचन कथकली नृत्य के माध्यम से किया गया। यह प्रस्तुति जितनी शेक्सपियर की रचना की थी, उतनी ही कथकली की भी। मोहिनीअट्टम नृत्य चाइकोवस्की के संगीत पर तैयार किया गया। इसमें नृत्यांगनाओं ने अपनी शास्त्रीय पहचान को कहीं भी कम नहीं होने दिया। कथक केंद्र के गुरुओं के परंपरा को पुनर्स्थापित करने को वे एक ईंट की दीवार मानती हैं और उनका मानना है कि

कथक को एक वृद्धि करते हुए पौधे की तरह देखा जाना चाहिए, जिसे ज्यादा से ज्यादा पोषण का वातावरण मिले। वे व्यंग्य भी करती हैं कि यदि कथक में होने वाले प्रयोगों को कथक का हिस्सा नहीं माना जा सकता, तो अकादमी को एक नए अवार्ड की ही घोषणा कर देनी चाहिए, जो उन कथक नृत्यांगनाओं को दिया जाए, जिन्होंने कथक को नाचा ही न हो [22]। इस बात के माध्यम से यह स्पष्ट करना है कि मुख्यतः वे कथक को किसी खाँचे में बाँधने के पक्ष में नहीं हैं। अपने इसी विरोध के चलते उन्होंने संगीत नाटक अकादमी का पुरस्कार नहीं लिया।

अदिति बहुत आत्मनिर्भर रही हैं। वे दो योग्य गुरुओं से नृत्य सीखीं, पर फिर भी उन्होंने अपनी एक अलग राह चुनीं। उनका मानना है कि शिष्य, गुरु की फोटोकॉपी नहीं होना चाहिए, बल्कि उसकी एक अपनी पहचान हो। अदिति ने कथक की पारंपरिक शैली का ज्ञान प्राप्त किया और उसे नए मुद्दों के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया। इसके साथ कथक को नए रूप में ढालकर तमाम गैर-पारंपरिक प्रस्तुतियाँ भी कीं। उन्होंने अपनी गुरु कुमुदिनी के कार्य को आगे बढ़ाया और यह सिद्ध कर दिया कि कथक के अंदर अनंत संभावनाएँ हैं, जिन्हें जान और समझकर विभिन्न प्रकार की रचनात्मक प्रस्तुतियाँ दी जा सकती हैं। उनकी प्रमुख प्रस्तुतियों में नाउ इज़, टेक्स्चर ऑफ सायलेंस, शैडोज़ ऑफ द माइंड, टाइमलेस, अनचार्टेड सी, चेंजिंग लैंडस्केप आदि रही हैं, जो नृत्य में नवाचार के क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं। यहाँ मैं चर्चा करना आवश्यक समझती हूँ कि अदिति नृत्य में नवाचार और सामाजिक मुद्दों को अलग नजरिए से देखती हैं। अपने साक्षात्कार में अदिति बताती हैं कि नृत्य में नवाचार एक अलग चीज़ है, जबकि सामाजिक मुद्दों पर नृत्य प्रस्तुत करना एक दूसरी चीज़। हमेशा ऐसा नहीं हो सकता कि सामाजिक मुद्दे नृत्य में परिवर्तित ही किए जा सकें। अतः ज़रूरी नहीं है कि सामाजिक मुद्दों पर तैयार की गयीं प्रस्तुतियाँ हमेशा सफल ही हों, या संभव हों। अदिति ने सामाजिक मुद्दों से ज्यादा अपने नृत्य में अन्य नवाचारों को स्थान दिया है, पर नवाचार भी अपने भीतर एक प्रतिरोध की संस्कृति रखते ही हैं, क्योंकि ये सिर्फ चंद पारंपरिक रचनाओं तक सीमित नहीं होते, बल्कि इनका फलक काफी बड़ा होता है। ये अपनी प्रस्तुति में एक विचार प्रस्तुत करते हैं। **टेक्स्चर ऑफ सायलेंस** अदिति की एक खास प्रस्तुति है, जिसमें किसी तरह के संगीत या शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। मंच पर छायी खामोशी के बीच से ही सुरों को तलाश कर एक समूह प्रस्तुति दी गई।

मानो कि सभी अपने हृदय की धडकनों के संगीत को एक साथ मिलाकर उसे सुनते हुए नृत्य कर रहे हों। खामोशी का भी अपनी कोई संगीत हो सकती है, इस प्रस्तुति के माध्यम से दिखाया गया[23]। **शैडोज़ ऑफ माइंड** अदिति की एक बेहद अनूठी प्रस्तुति है। इस प्रस्तुति में सबसे खास बात नृत्य के साथ प्रकाश का अभिनव प्रयोग है। इस प्रयोग की खासियत है कि प्रकाश के माध्यम से मंच पर एकल प्रस्तुति देती अदिति की छाया के माध्यम से एक समूह नृत्य का आभास कराना। इसमें सबसे खूबसूरत प्रकाश का प्रयोग, तब दिखता है, जब धीरे-धीरे प्रकाश के माध्यम से शरीर का छोटा होता जाना और छाया का बढ़ते जाना दिखता है। इस प्रस्तुति की दर्शनीयता देखते ही बनती है[24]। **ड्रे** प्रस्तुति महाभारत की कथा को लेकर तैयार की गई है, पर इसे आज की स्थितियों से जोड़कर प्रस्तुत किया गया। नृत्य के साथ इसमें कठपुतली की कला को शामिल किया गया। यह प्रस्तुति दुनिया में युद्ध की व्यर्थता को सामने लाती है। महाभारत की एक पात्र गांधारी कृष्ण से यह सवाल करती है कि महाभारत के युद्ध के बाद विजय का क्या अर्थ रह जाता है, जबकि उस जीत का जश्न मनाने वाला तो कोई बचा नहीं। कौन खुशी मनाए सबके हृदय तो उजड़े हुए हैं। गांधारी कृष्ण से पूछती हैं कि तुम तो सर्वज्ञाता थे। जब तुम, जानते थे कि इससे से इतनी जनहानि होगी, तो तुमने इसे क्यों नहीं रोक लिया। तुमने यह युद्ध क्यों नहीं रोक लिया। आज के हिंसक समय में इस तरह की प्रस्तुतियाँ काफी सार्थक हैं [25]।

7. दक्षा सेठ

दक्षा कथक की पहली नृत्यांगना हैं, जिन्होंने शास्त्रीय नृत्य के साथ हिंदुस्तान की युद्ध कला पर आधारित नृत्यों जैसे छऊ, कलारिपयट्टू आदि को सीखा और उनका कथक के साथ सामंजस्य बैठाकर नृत्य की अपनी एक अलग भाषा विकसित की। छऊ को तो दक्षा ने बिहार और ओडिसा के बेहद दुर्गम इलाकों से सीखा। उनकी बेटी उस समय बहुत छोटी थी। उसे लेकर उन्होंने इस कठिन कला का ज्ञान प्राप्त किया। दक्षा हिंदुस्तान की पहली नृत्यांगना थी, जिन्होंने इस पुरुष वर्चस्वशील नृत्य की एकल प्रस्तुति दी। 25 साल की कथक की ट्रेनिंग के साथ उन्होंने 18 साल मार्शल आर्ट भी सीखा, जिसमें कलारिपयट्टू, छऊ के साथ खंबे पर चढ़ने की तकनीक 'मालाखंब' भी शामिल है।26] । दक्षा ने इन कलाओं के संगम से कई नायाब नृत्य

प्रस्तुतियाँ की। इन प्रस्तुतियों को कथक से बाहर ही रखा गया और उसे समकालीन नृत्य की शैली में ही माना गया, ताकि कथक के पारंपरिक रूप में बदलाव न हो जाए।

दक्षा बताती हैं कि पहले उनके नृत्यों का बहुत विरोध किया जाता था। खासतौर पर वस्त्रों को लेकर। मार्शल आर्ट में सहूलियत के लिए वस्त्रों का कम प्रयोग होता है। चूँकि ये नृत्य पुरुष प्रधान होता है, अतः किसी को कोई दिक्कत नहीं होती थी। अब जब मार्शल आर्ट की प्रस्तुति महिलाएँ करेंगी तो, वस्त्रों का मुद्दा आएगा। अब ये नृत्य शास्त्रीय नृत्यांगनाओं की वेशभूषा में तो प्रस्तुत नहीं किए जा सकते। जब दक्षा ने मार्शल आर्ट के हिसाब से महिलाओं का वस्त्र विन्यास किया, तो तमाम नैतिकतावादी उनके विरोध में उतर आए। उन्हें कार्यक्रम तक मिलने बंद हो गए, पर उन्होंने अपनी प्रस्तुतियों से कोई समझौता नहीं किया। नैतिकता-अनैतिकता के बंधनों से दूर वे अपने हिसाब से अपना काम करती रहीं, फिर उन्हें जर्मनी से ऑफर आया। वहाँ उन्होंने सर्पगति की शानदार प्रस्तुति दी। उससे प्रभावित हो कर लोगों ने इंग्लैंड, क्रोशिया में भी आमंत्रित किया। विदेशों में मशहूर होने के बाद देश वालों ने भी उन्हें अपनाया।[27] दक्षा कहती हैं बार-बार एक ही चीज़ को करते जाना बेहद ऊब पैदा करने वाला होता है। हम सिर्फ नृत्य में ही प्रयोग नहीं करते, बल्कि अपने पूरे जीवन को ही प्रयोग मानते हैं [28]। इसी प्रयोगात्मक विचार के साथ इन्होंने भूखम, यज्ञ, साड़ी, सर्पगति, शिव शक्ति, पोस्टकार्ड फ्रॉम गॉड आदि प्रमुख प्रस्तुतियाँ दीं। दक्षा की एक महत्त्वपूर्ण प्रस्तुति **साड़ी** नाम से है। यह प्रस्तुति 9 अक्टूबर 2012 को वर्ल्ड क्राफ्ट्स समिट, कैवलम में प्रस्तुत की गई। एक कपास के बीज से किस तरह की प्रक्रियाओं को पूरा करते हुए, बुनाई के बाद एक साड़ी तैयार होती है। मानव के श्रम की महत्ता के साथ इसमें एक स्त्री के सौंदर्य की वृद्धि करने वाले वस्त्र के रूप में साड़ी निर्माण की पूरी कथा को इस अभिव्यक्ति में व्यक्त किया गया है।[29] **सर्पगति** समकालीन भारतीय नृत्य में एक बेहद महत्त्वपूर्ण प्रस्तुति के रूप में देखा जाता है। इस प्रस्तुति में साँप को मुख्य बिंदु के रूप में रखा गया है। भारत में साँपों की पूजा का रिवाज़ है। उन्हें लेकर तमाम दंतकथाएँ भी प्रचलित हैं। साँप वैभव, उर्वरता और शक्ति के प्रतीक माने जाते हैं। इसके साथ-साथ तांत्रिक प्रतीकों में खासतौर पर साँप को कुंडलिनी शक्ति का प्रतीक भी माना जाता है। कुंडलिनी के कुछ चक्रों के प्रतीक के रूप में आकाश जल और पृथ्वी को भी शामिल किया जाता है। ये प्रतीक जीवन के आधार के रूप में माने जाते

हैं, जो कि जीवन के आगे बढ़ने और मानवीय वर्चस्व से जुड़े हैं [30]। **सर्च फॉर माय टंग (मेरी ज़ुबां की खोज)** प्रस्तुति एक गुजराती कवयित्री सुजाता भट्ट, जो कि अमेरिका में पलीं-बढीं और फिर जर्मनी में रहने लगीं, की कविता पर आधारित थी। यह कविता बदले हुए समाज में अपनी जड़ों से दूर जाकर अपनी पहचान बनाते-खोजते युवा वर्ग और उसके संघर्षों पर आधारित है। खासतौर पर एशियायी युवाओं पर। नई भाषा, नए परिवेश में स्वयं को स्थापित करने की जद्दोजहद, लेकिन धीरे-धीरे खुद को, अपनी भाषा को खोते जाने का अहसास भी है। इस नृत्य प्रस्तुति में एक नए क्षेत्र में आकर अपने पहचान तलाशने के संघर्ष की गाथा प्रस्तुत की गई है [31]।

8. प्रेरणा श्रीमाली

प्रेरणा श्रीमाली एक ऐसी नृत्यांगना हैं, जो कि अमूमन नृत्य की दुनिया के बने-बनाए ढाँचों पर प्रश्न उठाती आयी हैं, लेकिन नृत्य में नवाचार पर उनकी ज्यादा सहमति नहीं दिखती। स्वयं उन्होंने नृत्य में नवाचार को लेकर कम प्रयोग किए हैं। उन्होंने विटनेस ऑफ वॉटर, कबीर, आवर्तन जैसी प्रस्तुतियाँ की हैं। पर उनका स्पष्ट मानना है कि दैनिक जीवन का यथार्थ काव्य की भाषा नहीं बन सकता और बिना काव्य के नृत्य असंभव। लेकिन कुछ पारंपरिक प्रतीकों के माध्यम से उन्होंने समसामायिक मुद्दों को अपने नृत्य में शामिल करने का प्रयास किया है। जल के प्रति जागरुकता पैदा करने के लिए जल संसाधन मंत्रालय के द्वारा जल उत्सव आयोजित किया गया, जिसमें रॉयल नीदरलैंड दूतावास और वर्ल्ड बैंक के जल विद्युत और डी॰एच॰वी॰ वाटर के सहयोग से जल सूत्र नाम से एक कार्यक्रम का आयोजन अप्रैल 2003 में हैबिटाट सेंटर में किया गया। इस कार्यक्रम में चित्रकला, फोटोग्राफी, फिल्मों, ध्वनि चित्रों, कविता, संगीत के साथ साथ नृत्य को भी शामिल किया गया था, जिसमें पानी की प्रस्तुति इन विभिन्न माध्यमों से की गई थी। इसमें प्रेरणा श्रीमाली ने **विटनेस ऑफ वाटर** नाम से कथक नृत्य की प्रस्तुति दी। इसमें उन्होंने वैदिक युग से आज के संदर्भ तक जल की विभिन्न स्मृतियों को प्रस्तुत किया। वर्षा, जल धाराएँ, समुद्र, नदी के किनारों पर कलरव करते पशु-पक्षी के साथ-साथ, राधा कृष्ण की जल क्रीड़ाओं को व्यक्त किया। रोज़मर्रा की जरूरत पानी की एक बेहद कलात्मक प्रस्तुति की गई।[32] प्रेरणा बताती हैं कि सामाजिक समस्याएँ समाज की कहानियाँ हैं, जिन्हें नृत्य में लाने के लिए उसे काव्य में परिवर्तित करना पड़ेगा, जो एक दुष्कर

कार्य है। प्रेरणा नृत्य में प्रयोगधर्मिता के बारे में अपनी स्पष्ट राय रखती हैं। उनका मानना है- ***हर विषय हर कला के लिए नहीं होता, ये मेरा पक्का मानना है जैसे कि हर कविता नृत्य के लिए नहीं होती।*** इस विचार के साथ प्रेरणा कथक नृत्य में नवाचारों की सीमाओं की तरफ इशारा करती हैं। सामाजिक मुद्दों के साथ यह खतरा हमेशा बना रहता है कि वह पूरी गंभीरता और संवेदनशीलता के साथ आ पाएगा या नहीं।

9. शाश्वती सेन

शाश्वती सेन कथक की पारंपरिक शैली में किसी भी तरह के परिवर्तन की हिमायती नहीं हैं, पर वे कथक के उसी पारंपरिक व्याकरण के साथ नए प्रयोग़ों को अपने नृत्य में स्थान देती हैं। उनकी प्रस्तुतियों में पारंपरिक शैली की ही अधिकता रहते है, फिर भी उन्होंने उसी दायरे में रहकर कई महत्त्वपूर्ण प्रस्तुतियाँ दी हैं। **रोमियो जूलिएट** में शाश्वती सेन ने अपनी एक नवीन प्रस्तुति दी। शाश्वती ने जूलिएट की भूमिका निभाई। दीपक महाराज रोमियो की भूमिका में थे। परिधान, सेट सभी दृश्यों के अनुरूप तैयार किया गया था[33]। यह शाश्वती की बेहद महत्त्वाकांक्षी परियोजना थी, जिसके लिए उन्होंने बेहद मुश्किल से बिरजू महाराज को तैयार किया। पहले वे इस प्रयोग में शामिल होने से हिचक रहे थे, पर बाद में राजी हुए। उन्होंने इसका संगीत दिया और उसमें पश्चिमी प्रभाव को शामिल करने के लिए प्रख्यात संगीतकार लुईस बैंक को शामिल किया। यह प्रस्तुति बहुत सराही गई थी। एक अन्य प्रस्तुति, जो कि शाश्वती ने मानुषी और भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम में दी। इस कार्यक्रम में खासतौर पर भारत की भक्त कवयित्रियों की रचनाओं को विभिन्न शास्त्रीय नृत्यों और गायन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया था। विभिन्न भाषाओं में प्रस्तुत भक्त कवयित्रियों की उनकी अपनी मात्र भाषा रचनाओं को नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत करना एक बेहतर प्रयास था। शाश्वती ने कथक के माध्यम से बंगाल की पहली बाउल रचनाकार कामिनी रॉय की रचना पेश की। इसका नाम दिया- "वेटिंग फॉर गॉड"।

10. प्रिया पवार

लंदन में बसी प्रिया पवार अपने पति प्रताप पवार और बेटी आसावरी पवार के साथ देश-विदेश में कथक का प्रदर्शन करती आई हैं। इस जोड़ी की खास प्रस्तुति है कथक की स्पेन के एक खास नृत्य फ्लैमेंको के

साथ जुगलबंदी करते हुए प्रस्तुति। प्रिया, आसावरी, और प्रताप ने लंदन में ही बसे होस और हुआनी के साथ कथक और फ्लैमेंको की जुगलबंदी प्रस्तुत की । अब तक भारतीय नृत्य-शैलियों की आपस में ही जुगलबंदी देखने को मिलती थी, पर दो भिन्न देशों के नृत्य की जुगलबंदी पहली बार देखने को मिली।

11. **कुमकुम धर**

भातखंडे की प्रोफेसर कुमकुम धर ने भी कई नृत्य नाटिकाएँ सामाजिक मुद्दों को लेकर बनायी हैं। लेकिन ज्यादातर वे मिथकों के ऊपर ही आधारित रही हैं, वे कहती हैं कि अमूमन प्रस्तुतियों को मिथकीय चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत करना आसान होता है। एक आम आदमी भी (धनुष खींचने और मुरली बजाने की भंगिमा बनाते हुए) इन मुद्राओं से वह समझ जाता है कि राम या कृष्ण की बात हो रही है। मिथकों की जानकारी होने के कारण वह जल्दी इन प्रस्तुतियों से जुड़ जाता है। उनसे लिए साक्षात्कार में उन्होंने अपनी प्रमुख प्रस्तुतियों का ज़िक्र किया, जिसे वे सामाजिक मुद्दों से प्रेरित बताती हैं। अपनी खास प्रस्तुतियों में वे लखनऊ की एक संस्था बेटी के लिए बनायी नृत्य नाटिका, जिसमें स्त्री शिक्षा को केंद्र में रखा गया था। उसके कई शो भी हुए थे, जिसमें ये संदेश था कि आपको अपनी लड़की को जरूर पढ़ाना चाहिए। बालिका शिक्षा के प्रति समाज में एक जागरुकता फैलाने हेतु इस प्रस्तुति को तैयार किया गया। कुमकुम ने दूसरी प्रस्तुति **नारी जयते** का ज़िक्र किया। नारी जयते मुख्यतः द्रौपदी के प्रतिशोध को ध्यान में रखकर बनायी गई थी, जिसमें वह मदद के लिए कृष्ण को नहीं पुकारती, बल्कि स्वयं हाथ में त्रिशूल लेकर दुःशासन का वध करती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इन नृत्यांगनाओं ने अलग-अलग स्तर पर कथक के क्षेत्र में स्थापित वर्चस्व को चुनौती दी और नृत्य को सिर्फ मनोरंजन या आराधना का ही माध्यम नहीं माना, बल्कि उसे अपनी रचनाशीलता और अपने सामाजिक सरोकारों को प्रस्तुत करने का माध्यम भी माना। भरतनाट्यम की मशहूर नृत्यांगना आनंदा शंकर जयंत ने 16 मार्च 2002 को हैदराबाद विश्वविद्यालय में **परफॉर्मर्स एंड देयर आर्ट्स: चेंजिंग लाइव्स, चेंजिंग फॉर्म्स सेमिनार** में अपना वक्तव्य देते हुए कुछ बेहद महत्त्वपूर्ण बातों की तरफ लोगों का ध्यान केंद्रित किया। उन्होंने प्रदर्शन कला के क्षेत्र में लोगों को अपनी सामाजिक भूमिका व

ज़िम्मेदारी के प्रति सजग होने का आह्वान किया, जिसका कम से कम शास्त्रीय नृत्य के क्षेत्र में काफी अभाव दिखता है। उन्होंने भी अपने नृत्य में सामाजिक समस्याओं को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। अपनी इस भूमिका के बारे में वे अपने कहती हैं कि ***मैं एक ऐसी व्यक्ति हूँ, जिसके ऊपर अलग-अलग संस्कृतियों का प्रभाव है। मेरा जीवन, मेरे संस्मरण कई बार मेरी अपनी भाषा (नृत्य) में व्यक्त होना चाहते हैं। मेरी अपनी सामाजिक, राजनीतिक सोच मेरे काम में व्यक्त होना चाहती है। हम किसी निर्वात में नहीं रहते, जहाँ कुछ भी घटने का हम पर कोई फर्क ही न पड़ता हो। मैं कई बार अपने आपसे पूछती हूँ कि क्या मैं अपने आस-पास की समस्याओं से स्वयं को दूर कर सकती हूँ ? क्या मैं सिर्फ एक खूबसूरत नृत्यांगना ही बने रहना चाहती हूँ या मैं अपने काम से कुछ और अपेक्षा भी करती हूँ ? या क्या मैं पारंपरिक काव्य को आज के हालातों के संदर्भ में जोड़कर देख सकती हूँ*** [34]? इसके बाद वे पदम (पारंपरिक काव्य) का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण देते हुए कहती हैं कि उसमें नायिका की सखी नायक को बताती है कि नायिका बेसब्री से दरवाजे पर खड़े होकर तुम्हारा इंतज़ार कर रही है। वहीं वे दूसरा उदाहरण देती हैं कि नायिका अपनी सखी से कहती है कि तुम जाओ और उसे अपने साथ लेकर आओ। इस पर आनंदा अपनी प्रतिक्रिया देती हुई कहती हैं कि ***मैं एक आत्मनिर्भर, विभिन्न तकनीकों से परिचित महिला होने के नाते प्रेमी के लिए इस पर निर्भरता कैसे स्वीकार कर सकती हूँ ? क्या मैं अपने आस-पास की खुशियों से अनभिज्ञ हूँ ? क्या मैं अपने आस-पास जेंडरगत, जातिगत या नस्लगत भेदभाव को नज़रअंदाज़ कर सकती हूँ? क्या धर्म के आधार पर होने वाली हिंसा का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं होगा। मैं खुद को दो खाँचों में कैद नहीं कर सकती हूँ कि जो मैं महसूस करती हूँ, वह मेरे काम और मेरी भाषा का हिस्सा ही नहीं बन पाए। मैं अपनी कला को आध्यात्मिक स्तर पर उठाने का प्रयास जरूर करूंगी पर इसके साथ अपने आस-पास की चीज़ों पर भी मेरी नज़र होगी। ऐसा नहीं हो सकता कि मैं किसी दहेज़ के कारण जली हुई किसी स्त्री का चेहरा देखूँ और उसकी आवाज़ मेरे नृत्य का हिस्सा न बन पाए***[35]।

नृत्यांगनाओं के ये तेवर उनकी आवाज़ और प्रतिरोध को व्यक्त करने के लिए काफी हैं। सामाजिक मुद्दों के अलावा मिथकों के भी गैर-पारंपरिक चरित्रों जैसे पूतना, कैकेयी, सूपर्णखा आदि को भी काफी स्पेस इन नृत्यांगनाओं ने दिया और नई तरह से उनके चरित्र को व्याख्यायित किया। ये चरित्र स्त्री की पारंपरिक

छवि से बिल्कुल हटकर रहे हैं। ये नृत्यांगनाएँ पारंपरिक बंधनों में अपनी कला को सीमित करके नहीं देखतीं।

पर इनकी इस रचनाधर्मिता को किस तरीके से लिया जाता है, उसके लिए एक उदाहरण प्रस्तुत है। सबसे पहले हमें ये जान लेना होगा कि ऐसा नहीं है कि कथक की पारंपरिक दुनिया में इन नवाचारों या प्रयोगधर्मिता को कोई बहुत बड़ी सहमति मिल गई है। आज भी इन नवाचारों को कथक से बाहर की वस्तु की तरह देखा जाता है और कथक के रूप के विकृत होने की बात कही जाती है। परंपरा से बाहर जाकर कुछ करना आज भी कथक की दुनिया में किस तरह प्रस्तुत होता है, वह इवनिंग न्यूज़ में भाश्वती मिश्रा के कार्यक्रम को लेकर छपी खबर **द बोल्ड स्टेटमेंट विद कथक** के पास छपे लाफ्टर में बने कार्टून को देख कर जान सकते हैं, जिसमें पानी में बिना कपडों के डूबी एक स्त्री दिखायी गई है, जिसके अंतःवस्त्र हवा में उड़ गए हैं[36]। इस तरह का मज़ाक उडाया जाता है, कथक में महिलाओं द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाली प्रयोगधर्मिता का। अदिति मंगलदास के साथ संगीत नाटक अकादमी द्वारा किए गए व्यवहार की जानकारी भी कला-प्रेमियों को है। कहीं-न-कहीं इस तरह के व्यवहार और सोच नृत्यांगनाओं के भीतर स्वयं को परंपरा के भीतर प्रस्तुतियों के लिए मजबूर भी करता होगा और पारंपरिक प्रस्तुतियों में वे द्वितीयक ही रह जाती है, क्योंकि प्रथम स्थान तो घरानेदार पुरुषों के पास ही होता है।

अमूमन नृत्य में प्रयोगधर्मिता और उनकी पारंपरिक नायिका के रूप में लंबी ट्रेनिंग नृत्यांगनाओं के अंदर एक ऊहापोह की स्थिति रखता है। इस कारण वे एक दायरे के बाद कथक के मूल पारंपरिक रूप और उसके मूल्यों से समझौता नहीं कर पातीं। ये द्वंद्व चलता रहता है और कहीं-न-कहीं वे पुनः उसी दायरे में सिमटती भी हैं। कई बार उन्हें लगता है कि उनके प्रयासों को कथक नृत्य से बाहर देखा जाएगा। अदिति मंगलदास का संगीत नाटक अकादमी से हुआ विवाद इस बात का गवाह है। इस परिघटना को उर्मीमाला सरकार ने बहुत विस्तार से अपने आलेख ***ए सेंच्यूरी ऑफ नेगोशिएशन: द चेंजिंग स्फेअर ऑफ द वूमेन डांसर इन इंडिया*** में समझाया है। "अपने आलेख के अंत में दो महत्त्वपूर्ण बात रखीं- ***प्रोजेक्शन ऑफ माई बॉडी एज़ नोन टू मी*** और ***प्रोजेक्शन ऑफ माई बॉडी एज़ इज़ एक्स्पेक्टेड बाई अदर्स।*** अर्थात् नृत्यांगना की प्रस्तुति

पर दो प्रभाव काम करते हैं, एक कि वह अपनी प्रस्तुति वैसे करती है, जैसा कि वह स्वयं को जानती समझती है और दूसरा उसकी प्रस्तुति पर लोगों का प्रभाव होता है कि वे उसे कैसे देखना चाहते हैं। इसमें गुरु, परिवार, समाज से लेकर राष्ट्र तक शामिल होता है। साथ ही शामिल होती है, उनकी पारंपरिक ट्रेनिंग, जो उनकी जेंडर्ड भूमिका को नायिका वर्णन के रूप में और मजबूती से उभारती है। एक नृत्यांगना के रूप में हमेशा उन्हें परंपरा की वाहक के रूप में माना जाता है, जो कि उनकी ज़िम्मेदारी को उनकी समकालीन अन्य महिलाओं से ज्यादा बढ़ा देता है, क्योंकि शास्त्रीय नृत्यांगना के रूप में उनसे ज्यादा अपेक्षाएँ होती हैं, वहीं वे आज के समय की शिक्षित स्त्रियाँ भी हैं, जो अपने कार्यक्रम बड़े स्तर पर देश-विदेश में सफलतापूर्वक आयोजित करती हैं, उनके तमाम नृत्य के स्कूल चलते हैं, जिसमें बड़ी संख्या में शिक्षित समुदाय के लोग अपने बच्चों को भेजते हैं। वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं। इसी बात को लेकर एक द्वंद्व रहता है। अतः तमाम नृत्यांगनाएँ कई बार चाहकर भी उस परंपरागत बंधन से स्वयं को आज़ाद नहीं कर पातीं, जिसमें वे कथक की पारंपरिक प्रस्तुति के माध्यम से जहाँ एक धर्म विशेष से ही जुड़ी रह जाती हैं, वहीं अपनी जेंडरगत पहचान भी मजबूत करती हैं[37]।

इन सीमाओं के बाद भी हम कथक के क्षेत्र में आये इन परिवर्तनों को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते। अगर इस सामंतवादी व्यवस्था में इन महिलाओं ने अपना रास्ता बनाया और आगे आने वाली लड़कियों के लिए भी मार्ग प्रशस्त किया। तो महिला गुरुओं के रूप में इन नृत्यांगनाओं ने इस पुरुष वर्चस्वशाली ज्ञान (शास्त्रीय नृत्य) के नियंत्रण को बड़ी चुनौती दी है।

रुक्मिणी देवी अरुंडेल ने कहा है कि **संस्कृति न प्रस्तुति या प्रदर्शन होती है, न मनोरंजन, बल्कि संस्कृति जीवन होती है और कला जीवन की अभिव्यक्ति [38]।** इन नृत्यांगनाओं ने अपनी प्रस्तुतियों में इसे सार्थक किया है। नृत्य के साथ अभिनव प्रयोग किये हैं, जिसमे इस कला को सामाजिक सरोकारों के साथ भी जोड़ा है।

[*प्रस्तुत शोध-पत्र प्रो.इलीना सेन के मार्गदर्शन में संपन्न पी-एच॰डी॰ शोध का हिस्सा है, इसलिए मैं अपनी शोध-निर्देशक की आभारी हूँ।*]

संदर्भिका

[1] Sircar, Manjusri Chaki. Tagore and Modernization of Dance. In New Direction in Indian Dance. Sunil Kothari (ed) pp32.

[2] Chakravarty, Pallabi. Bells of Change. pp68.

[3]file:///D:/innovation/The%20Hindu%20%20Magazine%20-%20Dance%20%20New%20vocabulary%20for%20Kathak.htm

[4]file:///D:/innovation/Renowned%20Dancer%20Kumudini%20Lakhia%20%20Tradition%20and%20Innovation%20Are%20Not%20Oppositional%20%20%20%20News%20&%20Events%20%20%20%20Swarthmore%20College.htm

[5]file:///D:/innovation/Articles%20-%20CHOREOGRAPHY%20IN%20THE%20INDIAN%20CONTEXT%20by%20Kumudini%20Lakhia.htm

[6]file:///D:/innovation/Renowned%20Dancer%20Kumudini%20Lakhia%20%20Tradition%20and%20Innovation%20Are%20Not%20Oppositional%20%20%20%20News%20&%20Events%20%20%20%20Swarthmore%20College.htm

[7] Laxmi, C.S. Mirror & Gestures. pp101

[8] Laxmi, C.S. Mirror & Gestures. pp93

[9] शोवना नारायण,व्यक्तिगत साक्षात्कार

[10] शोवना नारायण,व्यक्तिगत साक्षात्कार

[11] K. Binay Jha and others. Kathak: The World of Shovana Narayan. Pp102

[12]शोवना नारायण,व्यक्तिगत साक्षात्कार

[13] K. Binay Jha and others. Kathak: The World of Shovana Narayan. Pp88

[14] K. Binay Jha and others. Kathak: The World of Shovana Narayan. Pp87

[15] K. Binay Jha and others. Kathak: The World of Shovana Narayan. Pp91

[16] K. Binay Jha and others. Kathak: The World of Shovana Narayan. Pp107

[17] http://www.thehindu.com/arts/moving-poetry/article113428.ece

[18] http://www.ranikhanam.com/kathak_dancer.htm

[19] रानी खानम, व्यक्तिगत साक्षात्कार

[20] रानी खानम, व्यक्तिगत साक्षात्कार

[21]http://mumbaikarindelhi.blogspot.in/2007/09/aditi-mangaldas-snubs-narendra-modi.html

[22] http://www.tehelka.com/one-step-ahead-two-steps-back/

[23] http://www.aditimangaldasdance.com/texture-of-silence.php

[24] http://www.youtube.com/watch?v=PTOPEz_8E-c

[25] http://www.aditimangaldasdance.com/dre.php

[26]http://indiatoday.intoday.in/story/Making+the+right+moves/5/68416.html

[27] http://www.narthaki.com/info/intervw/intrvw18.html

[28]file:///E:/innovations/The%20Hindu%20%20Metro%20Plus%20Bangalore%20-%20Personality%20%20Experiments%20with%20a%20life.htm

[29]File://E:/innovations/Yards%20of%20imagination%20%20The%20Hindu.htm

[30] http://www.dakshasheth.com/repertoire/sarpgati

[31] http://www.dakshasheth.com/repertoire/search-for-my-tounge

[32] सिन्हा, मंजरी. कला के विविध रूपों में झलका पानी. नवभारत. 11/4/2003

[33] रोमियो जूलिएट का नृत्यमय सहज मंचन, शशिप्रभा तिवारी, जनसत्ता, 16/04/2004

[34] Jayant, Ananda Shankar. Art-Addressing Social Problems. In Performers and Their Arts. Simon Charsley and Laxmi Narayan Kadekar(ed) pp299

[35] Jayant, Ananda Shankar. Art-Addressing Social Problems. In Performers and Their Arts. Simon Charsley and Laxmi Narayan Kadekar(ed) pp299

[36] Mudgal, N.K. Bold Experiments in Kathak. Evening News. 22/04/ 1991

[37] Munshi, Urmimala Sarakar. A Century of Negotiations: The Changing Sphere of the Women Dancer in India. {Accepted for publication in subrata bagachi(ed) Women in Public Sphere: Some Exploratory Essays} pp16

[38] Jayant, Ananda Shankar. Art-Addressing Social Problems. In Performers and Their Arts. Simon Charsley and Laxmi Narayan Kadekar(ed) pp306

Citation: शुक्ला, अवंतिका (2016). कथक में स्त्री का स्वर और प्रतिरोध : नृत्य की अभिव्यक्ति, HindiTech: A Blind Double Peer Reviewed Bilingual Web-Research Journal, 7 (1), 1-26. URL: https://hinditech.in/kathak-men-stri-ka-swar-aur-pratirodh-nritya-ki-abhivyakti/